योग एवं यज्ञोपचार पद्धति द्वारा मानसिक वेदना का प्रबंधन

अमितेश कुमार*, प्रो. कुलदीप कुमार पाण्डेय, प्रदीप कुमार मिश्रा*, महाबीर शुक्ल***, डॉ. रमेश चंद्रा*****

सारांश:- वर्तमान वैश्विक परिवेश में विज्ञान ने द्रुतगति से प्रगति कर जीवन को सुखी बनाने और मानसिक इच्छाओं की पूर्ति हेतु कई साधन विकसित कर लिये हैं, परंतु इन समस्त वैज्ञानिक साधनों के बावजूद आज का मानव अवसाद जैसी मानसिक समस्याओं से घिरता जा रहा है। वह सुखी, संपन्न तो है परंतु उसके जीवन में आनंद का, स्वास्थ्य का अभाव है। कारणों का अवलोकन और विश्लेषण करने के पश्चात् हम पाते हैं कि हमने जीवन के मूलभूत तत्त्वों के संतुलन को नजर अंदाज कर दिया है। दरअसल जीवन विज्ञान और अध्यात्म दो मूलभूत तत्त्वों के संतुलन का परिणाम है। हमने वैज्ञानिक आयाम पर विकास तो किया पर आध्यात्मिक आयाम पिछड़ते गए। यही दोनों तत्त्वों के बीच असंतुलन और दूरी ने अवसाद और तनाव जैसे मनोरोगों को जन्म दिया है। बिना आध्यात्मिक संतुलन के विज्ञान का विकास विनाश की दिशा में जा सकता है।भारत की चैतन्य उर्वरा भूमि ने महान ऋषियों और दार्शनिकों को जन्म दिया है, जिन्होंने इस समस्या को पहचाना और इसके संतुलन और समस्या के समाधान हेतु समाज को सम्यक् दृष्टि (दर्शन) प्रदान की। योग एक भारतीय व्यावहारिक दर्शन तथा नैदानिक मनोविज्ञान है जो कि चित्त (मन, बुद्धि, चित्त, अहंकार) की समस्याओं का एकांतिक तथा आत्यंतिक समाधान करता है तथा विज्ञान और अध्यात्म के बीच संतुलन की दृष्टि उत्पन्न करता है। योग एक जागरूक एवं व्यावहारिक दर्शन है। अवसाद जैसे मानसिक रोगों से घिरे मनुष्यों में योग का दर्शन विकसित करने हेतु एक समर्थ गुरु, विशेष परिवेश के साथ साथ दीर्घ काल तक निरंतर अभ्यास की आवश्कता पड़ती है परंतु वे लोग जिनका दर्शन अभी सामान्य सांसारिक है उनकी मानसिक वेदनाओं के प्रशमन के क्या उपाय है?

प्राचीन भारतीय आयुर्वेदिक चिकित्सा पद्धति में जहाँ मानस रोगों के प्रशमन के उपायों और औषधियों की चर्चा है, वहीं रोगों के मूल कारणों की ओर संकेत करते हुए बताया गया है कि यज्ञ, जप, प्रायश्चित, कर्म, धर्मानुष्ठान इत्यादि से मन की सूक्ष्म परतों में जड़ जमाए विचारों एवं रोगों का मारण और निष्क्रमण किया जा सकता है। आयुर्वेद में इसे दैवव्यपाश्रय चिकित्सा कहते हैं, इससे शारीरिक और मानसिक रोगों (आधि- व्याधि) का प्रशमन होता है। ब्रह्मवर्चस की पुस्तक यज्ञ चिकित्सा में अवसाद तथा कई अन्य मानसिक रोगों से ग्रसित लोगों पर यज्ञ चिकित्सा के वैज्ञानिक प्रयोग का वर्णन तथा उसके परिणाम से प्राप्त सफलता दर्ज है। हम कह सकते हैं कि वर्तमान युग में अवसाद जैसे मनोरोग से ग्रसित मनुष्य की चिकित्सा योग और यज्ञोपचार विधि द्वारा सहज संभव है।

कुंजी शब्द- मानसिक वेदना, योग, यज्ञ, सम्यक् दर्शन, सम्यक् कर्म।

---

* शोधच्छात्र, संज्ञाहरण विभाग,आयुर्वेद संकाय, चिकित्सा विज्ञान संस्थान, काशी हिंदू विश्वविद्यालय, वाराणसी-221005, ईमेल-amiteshkrmishra6@gmail.com,yogayuscience@gmail.com

** प्रोफेसर एवं विभागाध्यक्ष, संज्ञाहरण विभाग, आयुर्वेद संकाय, चिकित्सा विज्ञान संस्थान, काशी हिंदू विश्वविद्यालय, वाराणसी-221005

*** शोधच्छात्र, स्वस्थवृत्त एवं योग विभाग,आयुर्वेद संकाय, चिकित्सा विज्ञान संस्थान, काशी हिंदू विश्वविद्यालय, वाराणसी-221005

**** शोधच्छात्र एवं सीनियर रेजिडेंट, संज्ञाहरण विभाग, आयुर्वेद संकाय, चिकित्सा विज्ञान संस्थान, काशी हिंदू विश्वविद्यालय, वाराणसी-221005

Source of support: Nil, **Conflict of interest:** None

प्रस्तावना - वर्तमान परिवेश में जहाँ विज्ञान के साधनों का द्रुतगति से विकास हुआ है, जीवन को सुखी और आरामदायक बनाने वाले कितने उपाय तथा कई समस्याओं के सामाधान विज्ञान ने उपलब्ध कराए हैं। काल के सापेक्ष सभी विषयों के ज्ञान का भी क्रमशः विकास हुआ है। आज का मानव विशेष साधनों से संपन्न है,उसके पास कई प्रकार की वैश्विक सूचना - संपर्क तथा सुख के साधन उपलब्ध हैं परंतु सवाल यह उठता है कि आज का मानव इतने विकास के बावजूद मानसिक रुप से बीमार और अवसादित क्यों है? उसके जीवन में सुख और आराम तो है परंतु शांति और आनंद का अभाव है।सूक्ष्म अवलोकन करने के पश्चात ऐसा प्रतीत होता है कि मानव ने जीवन के दो प्रमुख आयामों विज्ञान और अध्यात्म के बीच का संतुलन खो दिया है। विज्ञान यदि अध्यात्म के साथ संतुलन बनाकर न चले तो विनाशकारी साबित हो सकता है।सभी प्रकार के विज्ञान का मूल उद्देश्य अध्यात्म की परं स्थिति को प्राप्त करना है। विज्ञान केवल साधन है साध्य अध्यात्म का विषय है जो कि सत् चित् आनंद स्वरूप है। विज्ञान के साधनों से मिलने वाला सुख भी दुःखस्वरूप ही है जब तक कि उससे अध्यात्म का विकास और स्थिति न प्राप्त हो। योगियों ने इन साधनों के सुख को, इससे प्राप्त होने वाले परिणाम दुःख, ताप दुःख, संस्कार दुःख के कारण, दुःख स्वरूप ही माना है।

परिणामतापसंस्कारदुःखैर्गुणवृत्तिविरोधाच्च दुःखमेव सर्वं विवेकिनः।[1]

हमने विज्ञान का विकास तो किया परन्तु आध्यात्म की उपेक्षा कर दी और दोनों के मध्य का सम्यक् संतुलन बिगाड़ दिया यही कारण है कि आज का मानव अवसाद ग्रस्त है, मानसिक वेदनाओं से पीड़ित है ।विज्ञान और अध्यात्म के मध्य संतुलन बनाने में मुख्य भूमिका मनुष्य के जीवन दर्शन की होती है ,उसी दर्शन के अनुरूप उसका जीवन व्यवहार भी चलता है ।सम्यक् दर्शन के अभाव में असंतुलन की समस्या उत्पन्न होती है और मानव मानसिक रूप से बीमार हो जाता है ।सवाल यह उठता है कि जीवन और व्यवहार के संबंध में सम्यक् जीवन दर्शन कैसे उपलब्ध हो? धन्य है भारत की चैतन्य उर्वरा भूमि जिसने ऐसे ऋषि मुनियों को जना है जिन्होंने मानव जीवन की समस्याओं के समाधान हेतु दर्शनों का विकास किया। भारतीय दार्शनिक परंपरा में योगदर्शन जो की सांख्य दर्शन के सिद्धांत का व्यावहारिक स्वरूप है ,मूलत: मनोविज्ञान का विषय है। जो सम्यक् दर्शन की उपलब्धि कराता है, जिससे जीवन मे विज्ञान और अध्यात्म के बीच एक संतुलन स्थापित होता है।मानस विज्ञान की और उसकी समस्याओं के सामाधान हेतु योगदर्शन की उपयोगिता पर प्रो०रामहर्ष सिंह अपनी पुस्तक आयुर्वेदीय मानस विज्ञान मे लिखते है कि" भारतीय परिवेश में कोई भी मानस शास्त्र योग विज्ञान के अध्ययन के बिना पूरा नहीं हो सकता। योग की मौलिक अवधारणा यद्यपि दार्शनिक एवं आध्यात्मिक है और आत्मा परमात्मा के एकीकरण की प्रक्रिया को योग कहा गया है परंतु पातंञ्जल योग दर्शन के अनुसार योग एक मनोवैज्ञानिक प्रक्रिया है। चित्तवृति के निरोध को योग कहा गया है ।वस्तुतः योग दर्शन कम मनोविज्ञान का विषय अधिक है। योग के संदर्भ में वर्णित तथ्यों को आत्मसात् किए बिना मानस विज्ञान को पूर्ण रूप से समझना कठिन है।[2]

पातंजल योगदर्शन मे योग का लक्षण कहने की इच्छा से यह सूत्र प्रवृत हुआ है-

योगश्चित्तवृतिनिरोधः।।[3]

योग चित्तवृत्तियों का निरोध है। मन, बुद्धि, अहंकार और स्मृति को सम्मिलित रूप से चित्त कहा गया है ।अविद्या के कारण भ्रांतिदर्शन होता है, जिससे इनमें असंतुलन आने पर क्लिष्ट वृत्तियाँ उत्पन्न होती हैं। उस अवस्था में मनुष्य

चित्तवृत्तियों के समान स्वयं को अनुभव करता है।

वृत्तिसारूप्यमितरत्र।[4]

अर्थात् मनुष्य मानसिक रूप से असंतुलित और पीड़ित अनुभव करता है। इस अवस्था के परिणामस्वरूप चिंता, अवसाद इत्यादि मानसिक वेदनाएँ उत्पन्न होती हैं।योग की प्रक्रिया के द्वारा चित्तवृत्तियों के निरोध होने पर एकाग्र और शांत स्थिति में सम्प्रज्ञात समाधि सिद्ध होती है जिसमें विषयों की सम्यक् प्रज्ञा उत्पन्न होती है। सम्यक् प्रज्ञान की उपलब्धि के फलस्वरूप सम्यक् दर्शन का विकास होता है। उस सम्यक् दर्शन से मानसिक संतुलन की स्थापना होती है और द्रष्टा की अपने स्वरूप में अर्थात् पूर्ण स्वास्थ्य की स्थिति प्राप्त होती है। मानसिक वेदनाओं का प्रशमन होता है।मूलतः योग का अर्थ समाधि अर्थात् मानसिक सामाधान होता है जो कि विज्ञान (बुद्धि) और अध्यात्म (आत्मा) के बीच सम्यक् संतुलन से उपलब्ध होता है।

संतुलन के लिए सम्यक् दर्शन का होना नितांत आवश्यक है जो कि सम्यक् प्रज्ञान के फलस्वरूप ही उपलब्ध होता है तत्पश्चात् उस मानसिक असंतुलन या समस्या का सामाधान हो जाता है और मानव अपने शुद्ध आध्यात्मिक स्वरूप सत् चित् आनंद की स्थिति को प्राप्त करता है।दरअसल सम्यक् जीवन दर्शन ही मानव जीवन में विज्ञान और अध्यात्म के बीच के संतुलन को बनाये रखता है।मानसिक समस्याएं , वेदनाएं एक अनसुलझे तर्क ही है, जिसके मध्य संतुलन एवं सामाधान का अभाव है जो योग के अभ्यास से संतुलित और समाधित होता है।आयुर्वेद का भी कहना है कि "मानस रोग, धैर्य, स्मृति और समाधि से शान्त होते हैं"।[5]

समझने की बात यह है कि विज्ञान का उद्देश्य अध्यात्म की परं स्थिति तक पहुँचना होना चाहिए।साधनों का उदेश्य साध्य की प्राप्ति होनी चाहिए। विज्ञान भ्रामक दर्शन की स्थिति में स्वयं को चक्रिक स्वभाव वाला बना लेता है और मानव उस चक्र में उलझकर रह जाता है। ज्ञानियों ने विज्ञान के इस चक्रिक स्वभाव को संसार चक्र कहा है,यही भवरोग है, यही सभी वेदनाओं का मूल है, जिससे मानव पीड़ित है।इस भवचक्र से छूट जाना मोक्ष है और 'योग मोक्ष को दिलाने वाला है।[6]

सम्यक् जीवन दर्शन उपलब्ध होने के पश्चात् हमारे व्यवहार और कर्म भी सम्यक् होने लगते हैं। मानव जीवन की मूलभूत आवश्यकताओं की पूर्ति तथा काल- कर्म संप्राप्ति, असात्म अर्थों के आगम से उत्पन्न वेदनाओं के प्रशमन हेतु कर्म करना आवश्यक है। यही कर्मों में जब कुशलता आती है तब यह कर्म सम्यक् कर्म कहलाते हैं। जिसका शास्त्रों मे उपदेश है। यही कुशल कर्म यज्ञ कहलाते हैं। मानव जीवन में सूक्ष्म और स्थूल दोनों ही स्तरों पर कुछ मूलभूत इच्छाएं और जरूरतें होती हैं उनकी पूर्ति न होने पर मानसिक अवस्था असंतुलित हो जाती है जो रोग , दुःख उत्पन्न करती है। उन मूलभूत नित्य और नैमित्तिक इच्छाओं और जरूरतों की पूर्ति हेतु यज्ञ का प्रावधान ज्ञानियों ने बताया है। इच्छा की पूर्ति हेतु क्रिया करनी पड़ती है , किसी क्रिया को संपन्न करने में क्रियाशक्ति का योगदान होता है,ये क्रियाशक्ति जिस चेतना की अनुगामिनि है वो उसका देवता होता है। उस देवता के प्रसन्न होने पर क्रियाशक्ति उसकी अनुगामिनि होकर कार्य को संपन्न करती है,और मूलभूत इच्छाओं और जरूरतों को पूरा करती है , जिससे मानसिक संतुलन और स्वास्थ्य की प्राप्ति होती है।

यज्ञ जिसमें तीन तत्व होते हैं - द्रव्य, देवता, त्याग

यज्ञ एक समर्पण है वह देवता को जो मूलभूत इच्छाओं और जरूरतों को पूरा कर समस्याओं का प्रशमन करता है

उदाहरण स्वरूप शरीर पंच तत्वों से बना है , हर तत्व की एक शक्ति और चेतना होती है जो उसका देवता कहलाता है। विशेष देवताओं को प्रसन्न करने हेतु विशेष द्रव्य की आवश्यकता पड़ती है जिसको उस तत्व की अग्नि में समर्पित करना होता है। देवताओं तक द्रव्य (हवि) पहुँचाने का माध्यम अग्नि है। तब देवता तत्वों मे संतुलन प्रदान करते हैं।शारीरिक, मानसिक एवं आध्यात्मिक तत्वों मे संतुलन यज्ञ द्वारा स्थापित किया जाता है। यज्ञ एक साधन है योग (समाधान) का। "यज्ञ को भारतीय संस्कृति का मूल माना गया है। प्राचीनकाल से ही आत्मसाक्षात्कार से लेकर स्वर्ग सुख, बंधन-मुक्ति, मनः शुद्धि, पाप प्रायश्चित, आत्मबल, ऋद्धि-सिद्धियों आदि के केंद्र यज्ञ ही थे। यज्ञ द्वारा मनुष्य को अनेक आध्यात्मिक एवं भौतिक लाभ प्राप्त होते हैं।"[7]

ब्रह्मवर्चस ने अपनी पुस्तक यज्ञ चिकित्सा में शारीरिक और मानसिक रोगों- मनोविकृतियों के प्रशमन हेतु सूक्ष्मीकरण के सिद्धांत पर आधारित यज्ञ चिकित्सा का वर्णन किया है।

"सूक्ष्मीकरण के सिद्धांत पर आधारित यज्ञ चिकित्सा की यह विशेषता है कि इसमें रोगानुसार निर्धारित औषधियों को खाने के साथ ही हविर्द्रव्य के रूप में विविध समिधाओं के साथ नित्य हवन किया जाता रहे तो कम समय में अधिक लाभ मिलता है। नियत समय में मंत्रोच्चार के साथ किये गये हवन से एक विशिष्ट प्रकार की धूम्रीकृत प्रचंड ऊर्जा का निर्माण होता है, जो नासिकाछिद्रों एवं रोमकूपों द्वारा प्रयोक्ता के शरीर के सूक्ष्म से सूक्ष्म संरचना में प्रवेश कर जाती है और शरीर व मन में जड़ जमाकर बैठी हुई आधि-व्याधियों को समूल नष्ट करने में सफल होती है। जीवाणुओं, विषाणुओं का शमन करने और जीवनी शक्ति संवर्धन करने में यज्ञ ऊर्जा से बढ़कर अन्य कोई सरल व सफल साधन नहीं है।"[8]

इस सिद्धांत के आधार पर आयुर्वेद में जिस रोग के शमन के लिए जिन औषधियों का वर्णन किया गया है,उन्हीं रोगों के शमनार्थ उन औषधियों का हवन करना चाहिए। इस आधार पर कई चिकित्सकीय प्रयोग किये गए, जिसका वर्णन और परिणामों की सफलता उपरोक्त पुस्तक में दर्ज है।

आयुर्वेद के ग्रंथ चरक संहिता में मानसिक रोगों की चिकित्सा हेतु दैवव्यपाश्रय चिकित्सा का वर्णन है जिसके अंतर्गत मंत्र, औषधि, मणियों का धारण किया जाना, मंगल कर्म करने को बताया गया है। देवताओं के लिए या भूतों के लिए बलियाँ चढाई जातीहैं, हवन एवं प्रायश्चित किया जाता है, उपवास ,चंद्रायण व्रत के द्वारा शरीर को शुद्ध किया जाता है स्वस्तयन पाठ के द्वारा कल्याण की कामना की जाती है। देवता,पूज्य, गुरू आदि को नमस्कार कर और तीर्थ आदि में जाकर अपने पूर्वकृत कर्मों को दूर कर रोग दूर करने का प्रयास किया जाता है।

तन्त्रदैवव्यपाश्रयम्-मन्त्रौषधिमणिमङ्गलबल्युपहारहोमनियमप्रायश्चित्तोपवासस्वस्त्ययनप्रणिपातगमनादि, युक्तिव्यपाश्रयं-पुनराहारौषधद्रव्याणां योजना।।9

आयुर्वेद का भी कहना है कि संसार में धर्म, अर्थ, काम के बिना कुछ भी नहीं होता वह चाहे सुख हो या दुःख। इसलिए इनका अनुष्ठान करते रहना चाहिए। मानस रोग से पीड़ित होने पर बुद्धिमान मनुष्यों के लिए यह उचित है कि वह अपनी बुद्धि से हित और अहित का अच्छे प्रकार से विचार कर अहितकर धर्म, अर्थ, काम का सेवन न करें और हितकर

धर्म,अर्थ, काम के सेवन का प्रयत्न करें। इसके अतिरिक्त मनुष्य को आयुर्वेद, व्याकरण, योग आदि में जिस विद्या का उपासक हो उसी विद्या को जाननेवाले वृद्ध या श्रेष्ठ मनुष्यों की सेवा करने का प्रयत्न करना चाहिये। आत्मज्ञान, देशज्ञान, कुलज्ञान, कालज्ञान, बलज्ञान तथा अपनी शक्ति के ज्ञान में अधिक प्रयत्नशील होना चाहिये।।

तत्र बुद्धिमता मानसव्याधिपरीतेनापि सता बुद्धधा हिताहितमवेच्यावेच्य धर्मार्थ-कामानामहितानामनुपसेवने हितानां चोपसेवने प्रयतितव्यं, न ह्यन्तरेण लोके त्रयमेत- न्मानसं किंचिन्निष्पद्यते सुखं वा दुःखं वाः तस्मादेतच्चानुष्ठेयं - तद्विद्यानां चोपसेवने प्रयतितव्यम्, आत्मदेशकुलकालबलशक्तिज्ञाने यथावच्चेति ॥ 10

गीता में भगवान् श्रीकृष्ण भी यज्ञ के विषय में कहते हैं कि यज्ञ , दान, तप और कर्म का त्याग न करना चाहिये। इन सभी कर्मों को करते रहना चाहिए। यज्ञ, दान और तप बुद्धिमानों के लिए भी पवित्र अर्थात् चित्तशुद्धिकारक है। यज्ञ के विषय में भगवान् श्रीकृष्ण कहते हैं कि यज्ञ भी एक कर्म है और कर्म फलोत्पादक होते हैं । अतएव यज्ञ, दान, तप आदि कर्मों को बिना आसक्ति रखे, फलों का त्याग करके(अन्य निष्काम कर्मों के समान ही लोकसंग्रह के हेतु) करते रहना चाहिए।क्योंकि कर्म का दोष अर्थात् बंधकर्ता कर्म में नहीं फलाशा में है, अतः गीता में अनेक बार जो कर्मयोग का तत्व कहा गया है कि सभी कर्म फलाशा छोड़कर निष्काम बुद्धि से करना चाहिये। यही मानसिक वेदनाओं से रक्षण और प्रशमन हेतु यज्ञ कर्मों का सम्यक् स्वरूप है।

यज्ञदानतपः कर्म न त्याज्यं कार्यमेव तत् । यज्ञो दानं तपश्चैव पावनानि मनीषिणाम् ॥

एतन्यापि तु कर्माणि संगं त्यक्त्वा फलानि च कर्तव्यानीति मे पार्थ निश्चितं मतमुत्तमम् ॥11

विमर्श –

भारतीय दर्शन की मुख्य विशेषता इसकी व्यावहारिकता है भारत में जीवन की समस्याओं के प्रशमन हेतु दर्शनों का सृजन हुआ है। मानव ने जब स्वयं को वेदनाओं से पीड़ित पाया तब उसने इनसे छूटने की कामना की। इसी कामना से प्रेरित होकर इनके सामाधान हेतु भारत में दर्शनों का विकास हुआ। भारत में दर्शन का अनुशीलन मोक्ष के लिए किया गया है। मोक्ष का अर्थ ही है वेदनाओं से निवृति। योग दर्शन भी इसी भारतीय दार्शनिक परंपरा की एक कड़ी है । योग भारतीय प्राचीन दर्शन सांख्य का व्यावहारिक स्वरूप है।

इसमें साधकों की प्रकृति के अनुसार योग साधना को तीन स्तरों द्वारा व्यक्त किया गया है। अधम साधकों अर्थात् सामान्य लोगों के लिए अष्टांग योग, मध्यम साधकों के लिए क्रियायोग और उत्तम साधकों के लिए अभ्यास- वैराग्य बताया गया है। तथा दीर्धकालपर्यन्त ,लगातार तथा सत्कार सहित किये जाने पर यह ढृढ़भूमि वाला होता है।

जिससे सम्यक् दर्शन की स्थापना होती है। सम्यक् दर्शन हमारे कर्मों को सम्यक् बनाते हैं, ये सम्यक् कर्म यज्ञस्वरूप होते हैं। जो भारतीय संस्कृति , परंपरा के मूल में दृष्टिगोचर होते हैं। अपने आध्यात्मिक स्वभाव और सांस्कृतिक और परंपरांगत मूल्यों से भटकाव के कारण आज मानसिक वेदनाएँ उत्पन्न हो रही हैं। अपने मूल स्वभाव से सामंजस्य ही योग है और यज्ञ उसके निमित्त किये गये सम्यक् कर्म जिसका अभ्यास और व्यवहार करने से मानसिक वेदनाओं का प्रशमन तथा उनसे रक्षण होता है।

निष्कर्ष – अतः इसप्रकार से मानसिक समस्याएं विज्ञान (बुद्धि)और अध्यात्म (आत्मा)के असंतुलन से उत्पन्न होती हैं तथा इनके संतुलन के लिए सम्यक् जीवन दर्शन एवं सम्यक् कर्म की आवश्यकता पड़ती है, योग से सम्यक् दर्शन की उपलब्धि होती है ,और उस सम्यक् दर्शन से संतुलन और समाधान हेतु किये गए कर्म यज्ञ कहलाते हैं और यह योग, यज्ञरूपी कर्म मूल उद्देश्य अर्थात् सभी प्रकार कि मानसिक वेदनाओं की निवृत्ति कर मोक्ष प्रदान करते हैं।

संदर्भ –

1. पातंजल योगसूत्र, सा०पा०-2/15, पातंजलयोगदर्शनम्, व्याख्या०- डा० सुरेशचन्द्र श्रीवास्तव चौखम्भा सुभारती प्रकाशन, संस्करण-2015, ISBN:978-93-85005-26-8(PB)
2. आयुर्वेदीय मानस विज्ञान- प्रो० रामहर्ष सिंह, पृ० सं-६। चौखम्भा अमरभारती प्रकाशन, वाराणसी, संस्करण-1986
3. पातंजल योगसूत्र, स०पा०-1/2, पातंजलयोगदर्शनम्, व्याख्या०- डा० सुरेशचन्द्र श्रीवास्तव चौखम्भा सुभारती प्रकाशन, संस्करण-2015, ISBN:978-93-85005-26-8 (PB)
4. पातंजल योगसूत्र, स०पा०-1/4 , पातंजलयोगदर्शनम्, व्याख्या०- डा० सुरेशचन्द्र श्रीवास्तव चौखम्भा सुभारती प्रकाशन, संस्करण-2015, ISBN:978-93-85005-26-8 (PB)
5. मानसो ज्ञानविज्ञानधैर्यस्मृतिसमाधिभिः॥ चरक संहिता, सूत्रस्थानम्, अ०-1, श्लोक-58, सविमर्श- 'विद्योतिनि'- हिन्दीव्याख्योपेता, व्याख्या०- पं० काशीनाथ पाण्डेय एवं डा० गोरखनाथ चतुर्वेदी, प्रकाशक- चौखम्भा भारती अकादमी, वाराणसी-221001, संस्करण-2009
6. योगे मोक्षे च सर्वासां वेदनानामवर्तनम्।मोक्षे निवृत्तिर्निःशेषा योगो मोक्ष प्रवर्तकः॥ चरक संहिता, शरीरस्थानम्/ अ०१./श्लो० १३७, सविमर्श- 'विद्योतिनि'- हिन्दीव्याख्योपेता, व्याख्या०- पं० काशीनाथ पाण्डेय एवं डा० गोरखनाथ चतुर्वेदी, प्रकाशक- चौखम्भा भारती अकादमी, वाराणसी-221001, संस्करण-2009
7. यज्ञ चिकित्सा, लेखक- ब्रह्मवर्चस, प्रकाशक- श्री गायत्री वेदमाता ट्रस्ट, हरिद्वार(उत्तराखंड)-249411, संस्करण-2016
8. यज्ञ चिकित्सा, लेखक- ब्रह्मवर्चस, प्रकाशक- श्री गायत्री वेदमाता ट्रस्ट, हरिद्वार(उत्तराखंड)-249411, संस्करण-2016
9. चरक संहिता, सूत्रस्थानम्, अ०11,श्लोक-54, सविमर्श- 'विद्योतिनि'- हिन्दीव्याख्योपेता, व्याख्या०- पं० काशीनाथ पाण्डेय एवं डा० गोरखनाथ चतुर्वेदी, प्रकाशक- चौखम्भा भारती अकादमी ,वाराणसी-221001, संस्करण-2009
10. चरक संहिता, सूत्रस्थानम्, अ०11,श्लोक-46, सविमर्श- 'विद्योतिनि'- हिन्दीव्याख्योपेता, व्याख्या०- पं० काशीनाथ पाण्डेय एवं डा० गोरखनाथ चतुर्वेदी, प्रकाशक- चौखम्भा भारती अकादमी ,वाराणसी-221001, संस्करण-2009
11. श्रीमद्भगवदगीता अ.18,श्लोक.-6,गीता रहस्य, बाल गंगाधर तिलक, प्रकाशक- डायमंड पॉकेट बुक्स(प्रा.)लि., संस्करण-2018, ISBN:81-288-1887-2

❑